(6) किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग की कथा लिखें —

पेज -1

'किरातार्जुनीयम्' की कथा का मूलस्रोत महाभारत रहा है। इन्द्र तथा शिव को प्रसन्न करने के लिए की गई अर्जुन की तपस्या को आधार बनाकर कवि ने १८-सर्गों के महाकाव्य का वितान पल्लवित किया है। इतिवृत्त का आरम्भ द्यूतक्रीड़ा में हारे हुए — पाण्डवों के द्वैतवनवास से होता है। शास्त्रीय — दृष्टि से किरात का नायक धीरोदात्त अर्जुन तथा — मुख्य 'रस' वीर है। अप्सरा विहारादि वाला शृंगार इसी वीर रस का अँग बनकर आता है। महाकाव्यों की रूढ़ परिभाषा की दृष्टि से देखने पर इसमें — १८ सर्ग हैं तथा छहो ऋतुओं, सूर्योदय, सूर्यास्त, पर्वत, नदी, जल-क्रीड़ा, सुरत आदि का वर्णन पाया — जाता है, और इस तरह दण्डी तथा विश्वनाथ के द्वारा संकेतित महाकाव्य के सभी लक्षण यहाँ — देखे जा सकते हैं।

प्रथम सर्ग की कथा का प्रारंभ — द्वैतवनवास से होता है। युधिष्ठिर यहाँ रहकर भी दुर्योधन की ओर से निश्चिन्त नहीं है। वे एक वनेचर को दुर्योधन की प्रजापालन सम्बन्धी नीति को जानने के लिए 'चर' बनाकर भेजते हैं। ब्रह्म — चारी बना हुआ वह वनेचर सारी बातें जानकर लौट कर आता है, और उसके युधिष्ठिर के पास पहुँ — चने से काव्य का इतिवृत्त चलता है। वनेचर — दुर्योधन के शासन की पूरी जानकारी देता है, और इस बात का संकेत देता है कि जुए के बहाने से — जीती हुई पृथ्वी को वह नीति से भी जीत लेने की चेष्टा में लगा हुआ है —

विशङ्कमानो भवतः पराभवं नृपासनस्थोऽपि वनाधिवासिनः।
दुरोदरच्छद्मजितां समीहते नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः॥१७॥

इस प्रकार शत्रुपक्ष की सारी गूढ़ — तथ्यों का रहस्योद्घाटन कर तथा युधिष्ठिर से पारितोषिक प्राप्त कर वनेचर लौट जाता है, और द्रौपदी के पास ~~आकर~~ जाकर युधिष्ठिर वनेचर से प्राप्त जानकारी का विवरण — देता है। शत्रुओं की सिद्धि सुनकर क्रुद्ध और दुःखी —

द्रौपदी युधिष्ठिर को युद्ध के लिए उत्तेजित करती है। वह कटु शब्दों का प्रयोग करती हुई युधिष्ठिर की तपस्वि जनोचित शान्ति, दूसरे शब्दों में कायरपन की भर्त्सना करती है। युधिष्ठिर की कायरता पर संकेत करती द्रौपदी कहती है कि आपके (युधिष्ठिर के) सिवाय कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो अपनी सुन्दर पत्नी के समान गुणानुरक्त (सन्धि आदि गुणों से युक्त), कुलीन राज्यलक्ष्मी को, स्वयं अनुकूल साधन से युक्त तथा कुलाभिमानी होते हुए भी दूसरे के हाथों छिनती हुई देखे। आप समस्त साधन सम्पन्न तथा कुलाभिमानी है, पर अपनी राजलक्ष्मी को छिनते देख कर भी आपका स्वाभिमान जागृत नहीं होता, यह बहुत आश्चर्य की बात है। यदि कोई दूसरा व्यक्ति होता, तो इस तरह शान्त नहीं बैठ पाता। भला अपनी पत्नी को छिनते देख कोई बर्दाश्त कर सकता है, और उस पर यह कि वह (लक्ष्मी, पत्नी) स्वयं आपके पास रहना चाहती है: —

गुणानुरक्तामनुरक्तसाधनः कुलाभिमानी कुलजां नराधिपः।
परैस्त्वदन्यः क इवापहारयेन्मनोरमामात्मवधूमिव श्रियम् ॥(१।३१)

इस उक्ति के द्वारा द्रौपदी ने युधिष्ठिर के द्वारा उसे जुए दाँव पर लगाने तथा दुःशासन के द्वारा उसके अपमान की घटना की व्यञ्जना करके युधिष्ठिर को तीखा व्यंग्य सुनाया है। द्रौपदी यहीं नहीं ठहरती। वह साफ कहती है कि यदि युधिष्ठिर की क्षात्रियोचित वीरता अस्त हो गई हो, और वे क्षमा को ही सुख का साधन मानते हों, तो राजा के चिह्नस्वरूप धनुष को फेंक दें और जटा धारण कर वन में अग्नि होम किया करें। क्षमा ब्राह्मणों और तपस्वियों का गुण है, राजपुत्र होकर उसका आश्रय लेने से युधिष्ठिर क्षत्रियत्व की विडम्बना क्यों करा रहे हैं —

अथ क्षमामेव निरस्तविक्रमश्चिराय पर्येषि सुखस्य साधनम्।
विहाय लक्ष्मीपतिलक्ष्म कार्मुकं जटाधरः सन् जुहुधीह पावकम् ॥(१।४४)

खरी खोटी सुनाने के पश्चात् युधिष्ठिर के अभ्युदय की कामना द्रौपदी के द्वारा की जाती है और यहीं पर सर्ग समाप्त हो जाता है।

(7) युधिष्ठिर के प्रति वनेचर की उक्ति की समीक्षा करें ?

पेज -3

जब महाराज युधिष्ठिर जूए में हारकर पाँचों भाइयों तथा पत्नी (द्रौपदी) के साथ द्वैतवन नामक जंगल में निवास करते थे, उस समय उन्होंने दुर्योधन का समाचार जानने के लिए एक वनवासी (किरात-वनेचर) को ब्रह्मचारी के वेष में भेजा था। वह दुर्योधन की प्रजा पालन सम्बन्धी सारी जानकारी प्राप्त कर पाण्डवराज के लौट आया और कहने लगा कि हे महाराज! 'कार्य में नियुक्त नौकर को चाहिए कि वह मालिक को न ठगे, इसलिए मैं आप को सच बताता हूँ। पर सत्य बात केवल मीठी ही नहीं होती सो अगर मेरी बातें कड़वी भी हों तो आप कृपा कर उसे क्षमा कर सकते हैं क्योंकि जो बात भली और मीठी हो, ऐसी बात दुर्लभ है। स्वभावतः नहीं समझने योग्य राजाओं के चरित कहाँ ? फिर मेरे जैसे मन्दबुद्धि वाले आदमी कहाँ, इन दोनों में बहुत अन्तर है, ऐसा होने पर भी मैं आपके विपक्षियों के गूढ़तत्व की राजनीति को जो समझ सका हूँ, सो केवल आपका ही प्रभाव है। हे राजन! दुर्योधन इस समय यद्यपि राजसिंहासन पर बैठा है तथापि वन में रहने वाले आपसे डरता हुआ (जिसे जूए में छलसे जीता है) उस राज्य का नीतिपूर्वक शासन कर रहा है। वह काम क्रोधादि छः अन्तःशत्रुओं को जीतकर नीति का अनुसरण करता हुआ समय का विभाग करके सब कार्य करता है तथा नौकरों के साथ मित्र-भाव, मित्रों के साथ बन्धुभाव, और बन्धुओं के साथ स्वामिभाव निरभिमान होकर दिखलाता है। उसके यहाँ बड़े-बड़े राजा लोग आकर दरबार में कर देते हैं तथा उसके आदेश को प्राण-पण से पूरा करते हैं। उसके राज्य में सर्वत्र कृषि उत्तम रूप से होती है, और प्रजा प्रसन्नता से कर देती है। वह विश्वस्त गुप्तचरों के द्वारा दूसरे राजाओं का गुप्त समाचार जानता रहता है। उसका उद्योग कार्य हो जाने पर ही लोग जान पाते हैं। अतः आप उसे जीतने के लिए कोई प्रबल उपाय करें।

इस प्रकार उपर्युक्त बातें बताकर युधिष्ठिर के द्वारा दिये हुए पारितोषिक प्राप्त कर अपने घर चला गया।

Scanned by CamScanner

(8) युधिष्ठिर के प्रति द्रौपदी की उक्ति की विवेचना करें ?

पेज - 4

अपने शत्रुओं की उन्नति सुनकर, चित्त के क्षोभ को नहीं छिपा सकने वाली द्रौपदी अपने पति (युधिष्ठिर) के क्रोध और शत्रुनाश के लिए उद्योग कराने वाली बातें कहने लगी — आप लोगों जैसे महानुभावों के प्रति स्त्री लोगों की कही हुई बातें अपमान के समान हैं। तो भी (व्यापक?) मेरे चित्त का दुःख मेरे उचित शील को हटाकर मुझे बोलने के लिए प्रेरित करता है। हे महाराज भला बताइये तो, आपके बिना कौन ऐसा राजा होगा जो अपनी पत्नी के समान राजलक्ष्मी को दूसरे के अधीन कर देगा। हे नाथ! देखिये ये वही महाबली भीम हैं जो पहले सुन्दर पलंग पर सोते थे किन्तु आज जमीन पर सोते हैं और जिन्होंने उत्तर कुरु देश को जीतकर बहुत सा स्वर्ण लाकर दिया था वेही अर्जुन आज वल्कल पहने हुए हैं और ये दोनों सुकुमार सुन्दर नकुल एवं सहदेव कठिन भूमि पर सोते हैं। इन सबों को इस दशा में देखकर भी आपको दुःख नहीं होता यह देखकर मुझे अत्यन्त दुःख हो रहा है — हे महाराज! अब आप शान्ति छोड़कर शत्रुओं को नष्ट करने के लिए अपना पुराना तेज धारण कीजिये, क्योंकि शान्ति से मुनियों का कार्य होता है न कि राजाओं का —

विहाय शान्तिं नृपधाम तत्पुनः प्रसीद सन्धेहि वधाय विद्विषाम् ।
व्रजन्ति शत्रूनवधूय निःस्पृहाः शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः ॥(1/42)

सब प्रकार से समर्थ होते हुए भी शत्रु विजय के लिए आपका समय की प्रतीक्षा करते रहना उचित नहीं है क्योंकि विजय चाहने वाले राजा लोग समय पड़ने पर किसी न किसी बहाने सन्धि को भी तोड़ देते हैं। पर आप तो निश्चिन्त हैं यह ठीक नहीं है। तत्पश्चात उसके अभ्युदय की कामना करती हुई द्रौपदी कहती है — जैसे शाम को विपत्तिरूप महासागर में डूबकर सुबह फिर अन्धकार रूपी शत्रु का नाश कर उदित होते हुए सूर्य को शोभा अपनाती है, वैसे ही पहले जुआ में दैव और काल की प्रेरणा से अपने विनय और तेज के अभाव से दुर्दशा प्राप्त आपद् रूप महार्णव में डूबे हुए फिर भी अपने शत्रुओं को मारकर अभ्युदय की इच्छा रखने वाले आपको राजलक्ष्मी अपनावे।

इस प्रकार की उक्तियों के द्वारा कवि ने द्रौपदी को ओजस्विनी, स्वाभिमानिनी एवं मेधाविनी भारतीय नारी के रूप में प्रस्तुत किया है।